Indian Journal of Social Sciences and Literature Studies ISSN 2349-5634 (Print) ISSN 2455-0973(Online) Vol. 2 Issue 2
A peer reviewed refereed international Journal Impact Factor 3.12
© Contemporary Research Publication

हिन्दी काव्य रचना में प्रकृति-चित्रण

भरवाड पोपटभाई बी.
उत्तर बुनियादी कन्या विधालय, चोटीला

प्रकृति और मानव का सम्बंध उतना ही पुराना है, जितना कि सृष्टि के उद्भव और विकास का इतिहास प्राचीन है । प्रकृति-माँ की गोद में ही प्रथम मानव शिशु ने आँखें खोली थीं, उसी की क्रोड में खेलकर वह बडा हुआ और अन्त में उसी के आलिंगन में आबद्ध होकर वह चिर-निद्रा में सोता रहा । प्रकृति के उद्भव क्रियाकलापों से उसकी हृदयअवस्था भावनाओं, भय, विस्मय, प्रेम आदि-का स्फुरण हुआ; उसी की नियमितता को देखकर उसके मस्तिष्क में ज्ञान-विज्ञान की बुद्धि का विकास हुआ । दार्शनिक दृष्टि से भी प्रकृति और मानव का संबंध स्थायी है, चिरन्तन है । सत् रूपी प्रकृति, चित्-रूपी जीव और आनन्द-रूपी परम-तत्व तीनों ही मिलकर सच्चिदानन्द परमेश्वर की सत्ता का रूप धारण करते हैं । शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक, तीनों ही दृष्टियों से प्रकृति मानव का पोषण करती हुई उसे जीवन में आगे बढाती है ।

मानव और प्रकृति के इस अटूट सम्बंध की अभिव्यक्ति धर्म, दर्शन, साहित्य और कला में चिरकाल से होती रही है । साहित्य मानव का प्रतिबिम्ब है, अतः उस प्रतिबिम्ब में उसकी सहचरी प्रकृति का प्रतिबिम्बित होना स्वाभाविक है । इतना ही नहीं, प्रकृति मानव हृदय और काव्य के बीच संयोजक का कार्य भी करती रही है । न जाने हमारे कितने ही कवियों को अब तक प्रकृति से काव्य-रचना की प्रेरणा मिलती रही है । आदिकवि ने प्रकृति के दो सजीव प्राणियों में से एक का वध देखकर इतने आँसू बहाये कि उनसे कितने ही भूर्जपत्र गीले हो गये और वे आज भी गीले हैं । आषाढ के प्रथम बादलों को देखकर कवि-कुल शिरोमणि कालिदास तो इतने भावाभिभूत हो गये कि उनकी अनुभूतियाँ गाथा सुनाने के लिए प्रकृति की ओट बार-बार ली है । आधुनिक कवियों में भी अनेक कवियों को काव्य-रचना की प्रेरणा प्रकृति से मिली है । प्रकृति हमारे कवियों के लिए प्रेरणा का स्त्रोत ही नहीं, सौन्दर्य का अक्षय भंडार, कल्पना का अद्भूत लोक, अनुभूति का अगाध सागर, विचारों की अटूट श्रृंखला भी रही है ।

प्रकृति-चित्रण के प्रकार

काव्य में प्रकृति का प्रयोग कई प्रकार से किया जाता है । हिन्दी के एक विद्वान् ने इसके निम्नांकित ११ भेद गिनाये हैं - (१) आलम्बन रूप में, (२) मानवीकरण के रूप में, (३) पृष्ठभूमि के रूप में, (४) प्रतीकात्मक रूप में, (६) विम्ब प्रतिबिम्ब रूप में, (७) उपदेशिका के रूप में, (८) अलंकार दर्शन के रूप में, (९) दूतिका के रूप में, (१०) रहस्यात्मक रूप में, (११) मानवीकरण के रूप में । ऐसा प्रतीत होता है कि यह परिगणन केवल संख्या विस्तार के निमित्त ही किया गया है । 'पृष्ठभूमि के रूप में जिसके अन्तर्गत प्रकृति कहीं अनुकूल बनकर आती है और कहीं प्रतिकूल'-इसमें और 'उद्दीपन रूप में' कोई अन्तर नहीं है । इसी प्रकार 'दूतिका' का रूप भी मानवीकरण में समाविष्ट हो जाता है । मानवीकर को भी दो बार गिना दिया जाता है । वस्तुतः उपर्युक्त भेदों का समाहार निम्नांकित में ही हो जाता है-

१. आलम्बन रूप - जहाँ कवि स्वतंत्र रूप से प्रकृति का चित्रण केवल प्रकृति-वर्णन के उद्देश्य से ही कर रहा हो, वह आलम्बन रूप कहलाता है ।

२. उद्दीपन रूप - जहाँ कवि के मूल-भाव का आलम्बन तो कोई और होता है, किन्तु प्रकृति से वातावरण के द्वारा उस भाव को उत्तेजित करने में सहायता ली जाती है, उसे उद्दीपन रूप कहते हैं । जैसे चाँदनी रात के प्रभाव से विरहिणियों की वियोग वेदना का बढ जाना दिखाया जाता है ।

३. उपमान रूप - मूल विषय को स्पष्ट करने के लिए कविगण प्रकृति के उपादानों से उनका सादृश्य या वैषम्य प्रदर्शित करते हैं, जैसे 'उसका मुख चन्द्र-सा है ।' यहाँ चंद्र उपमान रूप में प्रयुक्त हुआ है । विभिन्न अलंकारों में इन उपमानों का प्रयोग कई प्रकार से होता है, अतः उसके अनुसार उपमान रूप के भी अनेक रूपभेद किये जा सकते हैं, जैसे-उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, अपह्नुति आदि ।

४. मानवीकरण रूप - जहाँ प्रकृति को सजीव रूप में उपस्थित करते हुए उसे मानवी रूप प्रदान कर दिया जाता है, उसे ही मानवीकरण रूप कहते हैं, जैसे- चाँदनी को लक्ष्य करके कहना- 'हे शुभ-वसना ! तुम किसे देखकर मुस्कुरा रही हो ?' वस्तुतः मानवीकरण रूपकातिशयोक्ति का ही एक भेद है ।

५. प्रतीक रूप - कवि अपने भावों को स्पष्ट रूप में न बताकर उन्हें प्रतीकों के माध्यम से व्यंजित करता है, जैसे- 'निराशा' के लिए ' अन्धकार' का, दुःख के लिए 'रात्रि' का, सुख के लिए 'दिन' का प्रयोग ।

६. अन्योक्ति या व्यंग्योक्ति के रूप में - कई बार कविता में किसी विचार को प्रत्यक्ष रूप में व्यक्त न करके प्रकृति के क्रिया-कलापों के माध्यम से ध्वनित किया जाता है । जैसे-

''माली आवत देखि के कलियाँ करें पुकार ।
फूले-फूले चुनि लिये कालि हमारी बार ।।
नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहि विकास इहि काल ।
अली कली ही सौं बँध्यो, आगे कौनु हवाल ।''[१]

सामान्य रूप से उपर्युक्त छह भेद ही प्रचलित हैं, किन्तु वैसे हमारे काव्यशास्त्र में जितने अर्थालंकार हैं; प्रायः सभी में प्रतीक का प्रयोग हो सकता है ।